इकाई– 1

लैंगिक मुद्दे–प्रमुख धारणाएँ
GENDER ISSUES–KEY CONCEPTS

1.1. समाज (SOCIETY)

1.1.1. समाज का अर्थ एवं परिभाषाएँ (Meaning and Definitions of Society)

सामान्यतः व्यक्तियों के समूह को हम **'समाज'** कहते हैं। इस प्रकार समाज के व्यक्तियों के बीच बने सामाजिक सम्बन्धों को हम 'समाज' कहते हैं। प्रत्येक समाज यह चाहता है कि समाज का प्रत्येक व्यक्ति एक उपयोगी सदस्य व समाज का एक अच्छा नागरिक बने, इसके लिए वह शिक्षा की प्रक्रिया को इस प्रकार सुनिश्चित करता है कि व्यक्ति अपने मूल्यों, आकांक्षाओं, आवश्यकताओं एवं आदर्शों से भली–भाँति परिचित हो सके और उसकी प्राप्ति हेतु अपने आप को योग्य बना सके तभी वह समाज का एक अच्छा नागरिक बन सकेगा। इस प्रकार समाज ही शिक्षा के उद्देश्य को निश्चित करता है कि किस प्रकार अमुक व्यक्ति शिक्षा में उद्देश्यों की पूर्ति करते हुए समाज का एक उपयोगी एवं कुशल नागरिक बन सके।

समाज या सोसाइटी (Society) शब्द लैटिन शब्द Soci से लिया गया है जिसका अर्थ है साथ या मित्रता।

सभी समाजशास्त्रियों ने निम्न ढंग से समाज की परिभाषाओं को प्रस्तुत किया है–

टालकॉट पारसन्स के अनुसार, "समाज को उन मानवीय सम्बन्धों की पूर्ण जटिलता के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो साधन तथा साध्य के सम्बन्ध द्वारा क्रिया करने में उत्पन्न होती है, वे चाहे वास्तविक हों अथवा प्रतीकात्मक।"

According to Talcott Parsons, "Society may be defined as total complex of human relationship in so far as they grow out of action in terms of means and ends, relationship– intrinsic or symbolic."

मैकाइवर और पेज के अनुसार, "समाज रीतियों तथा कार्यप्रणालियों के अधिकार तथा पारस्परिक सहयोग की, अनेक समूहों और विभागों की, मानव व्यवहार के नियंत्रणों और स्वतन्त्रताओं की एक व्यवस्था है। इस परिवर्तनशील व्यवस्था को हम समाज कहते हैं।"

According to Maciver and Page, "Society is a system of usages and procedure of authority and mutual aid, of many groupings and sub-divisions, of control of human behaviour and of liberties. This ever changing complex system we call society."

Scanned by TapScanner

लैपियर महोदय के अनुसार, "समाज से तात्पर्य व्यक्तियों के समूह से नहीं अपितु स
के व्यक्तियों के बीच होने वाली अन्तःक्रियाओं की जटिल व्यवस्था से है।"

According to Lapiere, "The term 'society' refers not to group of people but
the complex pattern of the forms of interactions that rise among and betwe
them."

मैकाइवर के अनुसार, "समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल है और यह हमेशा परिव
होता रहता है।"

According to Maciver, "Society is a web of social relationship and it is alw
changing."

उपर्युक्त परिभाषाओं के माध्यम से समाज की अवधारणा स्पष्ट हो जाती है एवं शिक्ष
माध्यम से समाज में आपसी प्रेम एवं भाईचारे की भावना को जागृत किया जा सकता

1.1.2. समाज की प्रमुख विशेषताएँ (Main Characteristics Society)

प्रत्येक व्यक्ति दिन–प्रतिदिन कई बार समाज शब्द का प्रयोग करते हैं, परन्तु स
वास्तविक रूप में है क्या? क्या हम जिस अर्थ में समाज को जानते हैं, वही समाज
आदि प्रश्नों का उत्तर हमें समाज की विशेषताओं से प्राप्त हो जाता है। अतः समाज
प्रमुख विशेषताओं का वर्णन निम्नलिखित प्रकार से किया जा रहा है–

1) **समाज अमूर्त है (Society is Abstract)**–समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल
समाज को न तो देखा जा सकता है और न इन्हें छुआ ही जा सकता है। इ
अनुभव किया जा सकता है। यदि हमसे कहा जाए कि समाज दिखाओ त
दिखा नहीं सकते क्योंकि समाज हमारे सम्बन्धों में पलता एवं बढ़ता है तथा
ये सम्बन्ध अमूर्त है। इसलिए सामाजिक सम्बन्धों के आधार पर निर्मित समा
अमूर्त है। समाज अमूर्त है इसे स्पष्ट करते हुए **राइट** ने लिखा है कि, "
व्यक्तियों का समूह नहीं, यह तो समूह के व्यक्तियों के बीच सम्बन्धों की व्य
है।"

इस प्रकार समाज अमूर्त सामाजिक सम्बन्धों की जटिल व्यवस्था है। 'समाज
अमूर्त शब्द है' इसकी व्याख्या करते हुए **रयूटर (Reuter)** ने लिखा है, "जिस
जीवन एक वस्तु नहीं है, बल्कि जीवित रहने की एक प्रक्रिया है, उसी प्रकार
एक वस्तु नहीं बल्कि सम्बन्ध स्थापित करने की प्रक्रिया है।" अतः स्पष्ट होता
समाज एक अमूर्त धारणा है।

2) **पारस्परिक निर्भरता (Interdependency)**–पारस्परिक निर्भरता को अन्योन्या
भी कहते हैं। पारस्परिक निर्भरता समाज की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। दूसरे
में यह कहा जा सकता है कि पारस्परिक निर्भरता समाज की उत्पत्ति एवं विक
एक आधारभूत तत्व है। पारस्परिक निर्भरता ही समाज को स्थायित्व प्रदान कर
प्रत्येक व्यक्ति का एक दूसरे से सम्बन्ध तब तक स्थायी नहीं बन सकता ज
कि उनमें पारस्परिक आश्रित न हो। वास्तव में यह मानव जीवन, सभ्यता,
एवं उन्नति का प्रमुख आधार है। स्त्री–पुरुष, पिता–पुत्र, शिक्षक–छात्र, नेता–
राजा–प्रजा तथा मालिक–नौकर आदि सभी एक दूसरे पर

Scanned by TapScanner

व्यक्ति अपनी सम्पूर्ण आवश्यकताएँ स्वयं पूर्ण नहीं कर सकता है, इसलिए एक–दूसरे पर निर्भर रहता है। सत्य तो यह है कि यदि मनुष्य अपनी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में स्वयं सक्षम होता तो उसे सामाजिक प्राणी बनने की आवश्यकता ही महसूस न होती। पारस्परिक निर्भरता ही मनुष्य को सामाजिक प्राणी बनने के लिए बाध्य करती है।

समाज का आधार सामाजिक सम्बन्ध है इसलिए समाज परिवर्तनशील रहता है क्योंकि सामाजिक सम्बन्ध सदैव परिवर्तित होते रहते हैं। **मैकाइवर एवं पेज** ने भी सामाजिक सम्बन्धों के सदैव परिवर्तित होने वाली जटिल व्यवस्था को ही समाज कहा है।

विभिन्न विचारकों का मानना है कि समाज सिर्फ मनुष्यों में ही नहीं पाया जाता बल्कि अन्य प्राणियों में भी पाया जाता है, **जैसे**– चीटियाँ, मधुमक्खियाँ। इनमें भी पारस्परिक जागरूकता, आत्मनिर्भरता सहयोग तथा संघर्ष,समानता एवं असमानता आदि विशेषताएँ पाई जाती हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि इनका भी एक समाज होता है किन्तु इनमें संस्कृति नहीं पाई जाती है। संस्कृति मात्र मनुष्य में पाई जाती है।

समानता एवं विभिन्नता (Likeness and Differences)–समाज में जहाँ सदस्यों के विचार, लक्ष्य एवं उद्देश्य में समानताएँ पाई जाती हैं, वहीं इन्हीं आधारों पर विभिन्नताएँ भी होती हैं। समानता से तात्पर्य सदस्यों में समान दृष्टिकोण से है। समानता संगठित होकर कार्य करने की प्रेरणा देती है।

गिडिंग्स (Giddings) इसे समानता की चेतना (Consciousness of Kind) कहते हैं लेकिन किसी भी समाज के विकास की एक मान्यता है– सदस्यों के गुण में विभिन्नता। विभिन्नता न केवल एक दूसरे पर निर्भर करती है बल्कि नवीन विचारों एवं आविष्कारों के लिए भी प्रेरित करती है।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि ये दोनों ही समाज के आवश्यक तत्व हैं दोनों का अपना–अपना महत्व है। किसी भी ऐसे समाज की कल्पना नहीं की जा सकती है जिसमें पूर्णतः समानता या असमानता हो। प्रत्येक समाज में ये दोनों बातें अनिवार्य रूप से पाई जाती है। अतः इन दोनों तथ्यों का वर्णन यहाँ हम अलग–अलग ढंग से करेंगे–

i) **समाज में समानता (Feeling of Equality in Society)**–जब तक लोगों में समानता की भावना नहीं होगी, तब तक उनका एक दूसरे से परस्पर सम्बन्ध होना सम्भव ही नहीं है तथा समाज का निर्माण भी नहीं हो सकता है। जो व्यक्ति शारीरिक एवं मानसिक दृष्टि से समान होते हैं तथा एक दूसरे के निकट होते हैं,उन्हीं के समाज में समानता पाई जाती है। पहले प्रारम्भिक छोटे व सरल समाजों में समानता का आधार नातेदारी या रक्त सम्बन्ध पर आधारित था। वर्तमान समय में यह विस्तृत होकर राष्ट्रीय समानता का एक मुख्य आधार बन गया है।

ii) **समाज में असमानता (Inequality in Society)**–लिंग भेद असमानता का सबसे बड़ा उदाहरण है। इसी भेद के कारण प्रजनन या सन्तानोत्पत्ति सम्भव हो पाई है। समाज में असमानताओं के पाए जाने के कारण ही प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे से लेन–देन करता है। यह परिवार, मित्रमण्डली, समूह, समिति समुदाय सभी में पाया जाता है।

Scanned by TapScanner

इस प्रकार समाज में विभिन्न प्रकार के विभेद व असमानताएँ प्रचलित हैं, **जैसे**– लिं भेद, व्यक्तित्व सम्बन्धी भेद, स्वभाव एवं प्रकृति सम्बन्धी भेद रुचि योग्यता एवं क्षमता सम्बन्धी भेद आदि। असमानताओं के बढ़ने का एक प्रमुख कारण विशेषीकरण की प्रक्रिया है।

अन्त में कहा जा सकता है कि समानता एवं असमानता एक दूसरे की पूरक है तथा दोनों ही महत्वपूर्ण हैं, अन्तर इतना है कि समानता प्राथमिक या प्रमुख है तथा असमानता द्वितीयक या गौण होती हैं।

4) **पारस्परिक जागरूकता (Mutual Awareness)**–किसी भी सामाजिक सम्बन्ध के निर्माण के लिए यह आवश्यक है कि सदस्यों को एक–दूसरे के अस्तित्व का आभास हो। पारस्परिक जागरूकता के अभाव में न तो सामाजिक सम्बन्ध बन सकते हैं और न ही समाज। पारस्परिक जागरूकता के बिना, दो व्यक्तियों के मध्य अन्तःक्रिया का प्रेरित होना सम्भव नहीं है। वे एक दूसरे को प्रभावित तभी करेंगे जब वे एक दूसरे को पहचानेंगे। अतः स्पष्ट है कि सामाजिक सम्बन्धों के लिए पारस्परिक जागरूकता का होना अत्यन्त आवश्यक है। इस जागरूकता के आधार पर निर्मित होने वाले सामाजिक सम्बन्धों की जटिल व्यवस्था को ही समाज कहा गया है। यह सामाजिक सम्बन्ध मात्र भौतिक एवं शारीरिक रूप से एक दूसरे के समीप होने से नहीं बनते हैं। सिनेमा हाल में बैठे लोग शारीरिक रूप से एक दूसरे के समीप होते हैं लेकिन पारस्परिक जागरूकता के अभाव के कारण सामाजिक सम्बन्ध का निर्माण नहीं कर पाते। इस प्रकार स्पष्ट है कि पारस्परिक सम्बन्धों के लिए पारस्परिक जागरूकता का होना अत्यन्त आवश्यक है।

5) **सहयोग एवं संघर्ष (Cooperation and Conflict)**–समाज का निर्माण मात्र सदस्यों के सहयोग से ही नहीं बल्कि संघर्ष से भी हुआ है। इसीलिए समाज में दो प्रकार की शक्तियाँ परिलक्षित होती हैं–प्रथम, जो मनुष्यों को एकता के सूत्र में बाँधती हैं वे शक्तियाँ तथा दूसरी, वे शक्तियाँ जो मनुष्य को एक दूसरे से अलग करती हैं। इस प्रकार सहयोग प्रथम तथा संघर्ष द्वितीयक तत्व के अन्तर्गत आता है। प्राचीन काल से लेकर वर्तमान समय तक समाज में सहयोग एवं संघर्ष चलता रहता है। अतः सहयोग एवं संघर्ष एक सार्वभौमिक प्रक्रिया के रूप में चलते रहते हैं। यहाँ हम सहयोग एवं संघर्ष पर पृथक रूप से विचार करेंगे–

i) **सहयोग (Cooperation)**–सामाजिक जीवन के लिए सहयोग महत्वपूर्ण है। यह सहयोग प्रत्यक्ष तथा परोक्ष दोनों रूप में हो सकता है जिससे समाज निर्मित होता है। बिना सहयोग के समाज की कल्पना सम्भव नहीं है।

ii) **संघर्ष (Conflict)**–सहयोग के साथ–साथ समाज मे संघर्ष भी परिलक्षित होता है। संघर्ष का प्रमुख कारण सामाजिक असमानता एवं समाज में तीव्रगति से होने वाले सामाजिक परिवर्तन हैं। धार्मिक, सांस्कृतिक विचारों, हितों, एवं उद्देश्यों के लिए भी लोग आपस में संघर्ष करते हैं लेकिन इससे समाज नष्ट हो जाता है।

अतः कहा जा सकता है कि जहाँ समाज है वहाँ संघर्ष है। संघर्ष कई बार अत्याचार, अन्याय एवं शोषण को समाप्त करने में भी सहायक होता है। फिर भी समाज में संघर्ष की अपेक्षा सहयोग का महत्व अधिक है। इसीलिए मैकाइवर एवं पेज ने कहा है कि "संघर्ष से कटा हुआ सहयोग है।" (Society is co-operation crossed by conflict)। अतः जिस समाज में संघर्ष की अपेक्षा सहयोग अधिक होगा, वह समाज उतना ही अधिक संगठित होगा।

Scanned by TapScanner